शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
ISSN 2320 – 0871
17 फरवरी 2014

हिन्दी अनुसंधान: कल आज और कल

डॉ. जोगिन्द्र कुमार यादव
उप निदेशक, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय (इग्नू),
क्षेत्रीय केन्द्र, चण्डीगढ़, हरियाणा, भारत

शोध संक्षेप

सदी के पहले दशक में शोध के क्षेत्र में अप्रत्याशित वृद्धि के कारण हिन्दी शोध के स्तर में निस्संदेह गिरावट आई है, लेकिन समय रहते ही इस बाढ़ को नियंत्रित/सीमित करके शोध के स्तर में वांछनीय सुधार की संभावनाएं भी दृष्टिगोचर हुई हैं। शोध के क्षेत्र में आ रही गिरावट ने नई चुनौतियों को जन्म दिया है जिनके लिए पर्याप्त उपाय एवं सुझाव भावी संभावनाओं को रेखांकित करते हैं, हिन्दी शोध की इसी दशा एवं दिशा को दर्शाने का प्रयास इस शोध पत्र में किया गया है। जिज्ञासा की तृप्ति और समस्याओं के समाधान के लिए मानव-मात्र में शोध की सहज-वृत्ति जब सुनियोजित और अनुशासित होकर क्रियाशील बनती है तब ज्ञान के विविध क्षेत्रों में नये तथ्यों का नया आविष्कार होता है। इसके द्वारा मानव का प्रगति-रूप तो प्रशस्त होता ही है, सभ्यता और संस्कृति का स्वरूप भी अधिक निखरता है। शोध-तंत्र का ज्ञान साहित्य के शोधार्थी को सम्बल प्रदान करता है। इससे उसका शोध-पथ सुगम बन जाता है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जहां शोध के क्षेत्रों का विस्तार हुआ है वहीं शोध के लिए सामग्री संकलन के लिए भी संसाधनों की वृद्धि हुई है। वैश्वीकरण के चलते हिन्दी शोध में अपेक्षित परिवर्तन हुआ है और इसी कारण विभिन्न विचारधाराओं और संस्कृतियों ने भी हिन्दी साहित्य को प्रभावित किया है। हिन्दी साहित्य के विभिन्न क्षेत्रों में तीव्र गति से अनुसंधान हो रहे हैं लेकिन अधिकांश शोधार्थियों को अनुसंधान विधि का अभीष्ट ज्ञान अभी तक उपलब्ध नहीं हो पाया है। ऐसा नहीं कि अनुसंधान की कसौटी स्वयं में पूर्ण है, विभिन्न समस्याओं एवं चुनौतियों के कारण संभावनाएं कुछ नया खोजती रहेंगी। प्रस्तुत पत्र में हिन्दी शोध की पूर्वपीठिका तथा विकास के चरणों के साथ-साथ शोध के प्रक्रिया पर भी प्रकाश डाला गया है।

भूमिका:

मानव मन में स्वभावतः नई-नई जिज्ञासाओं का उदय होता रहता है। तर्कशील और विवेकसंयुत प्राणी होने के कारण मनुष्य अपनी जिज्ञासाओं से संबद्ध क्षेत्रों में नए-नए प्रयोगों के द्वारा नए-नए अन्वेषणों में प्रवृत रहता है। ऐसे नए अन्वेषणों की प्रवृत्ति के पीछे मनुष्य का मूल उद्देश्य जीवन को अधिक सुखमय, सुन्दर, उदात्त, विराट और सांस्कृतिक बनाना होता है। इसके लिए मानव मन नई-नई खोजों में लीन रहता है। ज्ञात को अज्ञात बनाना तथा ज्ञात को पुनर्विवेचन द्वारा स्पष्ट तथा व्यवस्थित करना शोध-कार्य है। इसी प्रकार ज्ञान की तह तक पहुंचना तथा ज्ञान के ज्ञात-अज्ञात तथ्यों के विश्लेषण से सिद्धान्त निर्धारित करना शोध का दायित्व है। अंग्रेजी भाषा में 'शोध' शब्द का पर्याय 'रिसर्च' स्वीकार किया जाता है। हिन्दी में इसके लिए अनुसंधान, अन्वेषण, गवेषणा, अनुशीलन, समीक्षा, आलोचना, खोज आदि अनेक शब्दों का प्रयोग होता है। साधारणतयः हिन्दी में 'शोध' या 'अनुसंधान' शब्द ही प्रचलित हैं। अब तक शोध के पर्याय रूप में

जितने भी शब्दों को समझा गया है, उन सबसे अधिक शोध के स्थानापन्न रूप में व्यवहृत होने वाला शब्द कदाचित 'अनुसंधान' ही है। अधिककांश विद्वानों के अनुसार अनुसंधान का प्रचलन शोध की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक रहा है। साहित्यिक क्षेत्र में निस्संदेह 'अनुसंधान' शब्द का अपना अर्थ एवं महत्त्व है, लेकिन उपाधिपरक शोध के लिए अनुसंधान शब्द कुछ खटकता है। इसका निर्णय 'अनुसंधान' और 'शोध' शब्दों की अभिव्यंजना द्वारा ही संभव हो सकता है। अनुसंधान शब्द की गरिमा को नकारा नहीं जा सकता। साहित्य में दो प्रकार से अनुसंधान किया जाता है- एक तथ्यपरक तथा दूसरा तत्त्वपरक। किसी भी संस्कृति में जन्मे और जी रहे समाज के लिए अपनी संस्कृति के समुचित विकास के लिए ज्ञान-विज्ञान के- विज्ञान, दर्शन और साहित्य क्षेत्रों में शोध मूलभूत अनिवार्यता है। 'शोध' के आधार पर ही प्रकृति औरमानव-जीवन के अज्ञात एवं अनुपलब्ध रहस्यों की परतों के पीछे से जीवन-सत्य को साक्षात किया गया है। साहित्य के क्षेत्र में तो यह शोध-क्रान्ति नित नवीन व्याख्याओं को प्रस्तुत कर मनुष्य को अब भी चकित कर रही है। ज्ञान का व्यापक भण्डार होते हुए भी ज्ञान की सीमाओं का निरन्तर विस्तार 'शोध' का परिणाम है, अतः शोध की उपादेयता निस्संदेह अन्यतम है। डा॰ तिलक सिंह के अनुसार, "अनुसंधान के क्षेत्र में अज्ञात तथा विस्मृत तथ्यों को सर्वग्राह्य बनाना और ज्ञात तथ्यों को नवीन दृष्टि से संदेहरहित तथा निभ्रान्त बनाना शोध कहलाता है।" अतः शोध का उद्देश्य अज्ञात तथ्यों को खोजकर उसकी वास्तविकता को सभी के समक्ष प्रस्तुत करना मात्र नहीं है वरन् पहले से ही ज्ञात तथ्यों को नयी दृष्टि के माध्यम से इस तरह से प्रस्तुत करना है कि समाज को उस तथ्य के निष्कर्ष के प्रति कोई भ्रम या संदेह न रहे। हिन्दी शोध का उद्भव एवं विकास: जीवन और संस्कृति की गति और नियति के उक्त क्षेत्रों में शोध के अभाव में प्रगति के अवरुद्ध होने की आशंका को निर्मूल नहीं कहा जा सकता। संस्कृति के शाश्वत प्रतिमानों की पुष्टि और नवीन व्याख्या, नए मूल्यों और तथ्यों की खोज, विवादास्पद क्षेत्रों एवं विकल्पों के समाधान हेतु साहित्य के क्षेत्र में शोध का महत्त्व अपेक्षाकृत अधिक हो जाता है, क्योंकि साहित्य ही कदाचित् जीवन और संस्कृति के प्रति सबसे पहले उत्तरदायी होता है। इसका प्रमुख कारण यह है कि साहित्य ही ज्ञान-विज्ञान के सभी क्षेत्रों का सर्वाधिक समाहारकर्ता है। अस्तु, किसी भी भाषा तथा उसके साहित्य को लेकर किया गया शोध, उस भाषा तथा साहित्य की जनक संस्कृति की पौराणिकता, इतिहास, समसामयिकता तथा भावी संभावनाओं के महत्त्व का दिग्दर्शन करता है। भारत में विश्वविद्यालयीन शोध का आरम्भ भले ही 20वीं शताब्दी में हुआ हो किन्तु शोध की परम्परा प्राचीन युग से ही रही है। भारत की संस्कृति विश्व की प्राचीन संस्कृति है, यह विभिन्न शोधों द्वारा स्पष्ट किया जा चुका है। संस्कृत ग्रथों की अमूल्य सम्पदा में निहित भारत की सम्पूर्ण चिन्तनधारा और ज्ञान-विज्ञान ने ही शोध को जन्म देने में सहायक भूमिका निभाई। यास्क, पाणिनी और पतंजलि जैसे आचार्यों ने अपने ग्रन्थों में भाषा साहित्य के लिए व्यापक शोध के मार्ग प्रशस्त किए। संस्कृत के काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ आज भी सैद्धान्तिक रूप से हिन्दी शोध के लिए प्रमुख आधार हैं।

प्राचीन युग में विभिन्न विदेशी विद्वानों ने भारत में आकर साहित्यिक कृतियों की खोज की थी। धर्म, दर्शन और ज्ञान के विविध रूपों का केन्द्र होने के कारण यहां विदेशी विद्वान अध्ययन के लिए आते रहे। बौद्ध धर्म और दर्शन की जन्मस्थली होने के कारण चीन के कई राजाओं ने बौद्ध दर्शन सम्बन्धी साहित्य की खोज के विद्वानों को भारत भेजा। तत्पश्चात् मध्यकालीन भारत में मुगल राजाओं ने भी ग्रंथों के संग्रहण के कार्य द्वारा दुर्लभ कृतियों को सुरक्षित रखा। ऐसा माना जाता है कि बादशाह अकबर के निजी संग्रहालय मे ंपच्चीस हजार पाण्डुलिपियां सुरक्षित थीं। प्राचीन विक्रमशिला विश्वविद्यालय में हस्तलिखित ग्रन्थों का अगाध भण्डार था। नालन्दा और तक्षशिला जैसे प्राचीन विद्यापीठों ने तो दुर्लभ और अमूल्य पाण्डुलिपियों के संग्रहण के लिए अपने विद्यापीठ के विद्वानों को देश के कोने-कोने में भेजा। बहुत सारे कारणों से ऐसी बहुत-सी अमूल्य सम्पदा को हम संजोकर नहीं रख पाए जो विश्व के अन्य देशों के दुर्लभ पुस्तकालयों में आज भी विद्यमान हैं। लन्दन की 'इण्डिया आॅफिस लाइब्रेरी' और 'ब्रिटिश म्यूजियम' में ऐसी अनेक बहुमूल्य और दूर्लभ कृतियां विद्यमान हैं जिनके विषय में शोध कार्य अपेक्षित है।

आधुनिक काल के आरम्भ के साथ प्रेस का आविष्कार और पत्रकारिता के उदय ने हिन्दी साहित्य में शोध की प्रवृति को बढ़ावा दिया। विभिन्न गैर सरकारी संस्थाओं ने साहित्यिक पाण्डुलिपियों की खोज करना आरम्भ किया। इस दिशा में सन् 1893 में 'नागरी प्राचारिणी सभा' की स्थापना से शोध के नए अध्याय का आरम्भ हुआ। सन् 1896 में सभा की पत्रिका 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' ने विभिन्न पाण्डुलिपियों पर किए गए शोध-कार्यों को प्रकाशित करना आरम्भ किया। धीरे-धीरे साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं ने शोध की इस परम्परा को विकास प्रदान किया। सन् 1913 में 'मिश्रबन्धु-विनोद' जैसी शोध-कृति ने हिन्दी के 3757 साहित्यकारों के विवरण प्रस्तुत किए। हिन्दी शोध के विकास को हम निम्नवत् मुख्य तीन कालों में विभक्त कर सकते हैं हिन्दी शोध का आरम्भिक काल: सन् 1900 ई. से करीब 1935 ई. तक के समय को हिन्दी शोध का आरम्भिक काल माना जाता है। यह सत्य है कि हिन्दी शोध का आरम्भ सर्वप्रथम विदेशी विश्वविद्यालयों में विदेशी विद्वानों द्वारा हुआ। सन् 1911 ई0 में फ्लोरेंस विश्वविद्यालय के स्नातक इटली के विद्वान श्री लुइजि पिओ तेसीतोरी ने इटैलियन भाषा में 'रामचरितमानस और रामायण' नामक एक लेख लिखा। इस लेखक की विद्वानों ने खूब प्रसंशा की जिससे प्रेरित होकर फ्लोरेंस विश्वविद्यालय ने श्री तेसीतोरी को पी-एचडी. की उपाधि प्रदान की। इसे निर्विवाद रूप से हिन्दी-विषयक सर्वप्रथम विश्वविद्यालयीन शोध प्रबन्ध या निबन्ध माना गया है, हालांकि इससे पहले भी शोध की दिशा में छुट-पुट कार्य प्रारम्भ हो चुके थ,े लेकिन किन्हीं कारणों से प्रकाश में नहीं आ सके थे। हिन्दी विषयक शोध-विषय का दूसरा प्रयास लन्दन में किया गया। सन् 1918 ई. में श्री जे.एन. कारपेन्टर ने 'दि थियालाजी आफ तुलसीदास' विषय पर अपना शोध प्रबन्ध लिखा जोकि लन्दन विश्वविद्यालय द्वारा डी.डी. (डाक्टर आफ डिविनिटी) की उपाधि के लिए स्वीकृत हुआ। तीसरा शोध प्रबन्ध मोहिउद्दीन कादरी का 'हिन्दुस्तानी फौनेटिक्स' है जिस पर

लन्दन विश्वविद्यालय ने सन् 1930 ई. में पी-एच.डी. की उपाधि प्रदान की।

सन् 1931 में श्री बाबूराम सक्सेना ने 'एवोल्यूशन आफ अवधी' विषय पर 'प्रयाग विश्वविद्यालय' के संस्कृत विभाग के अन्तर्गत अपना शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत किया। इस शोध-प्रबन्ध पर उन्हें डी.लिट्. की उपाधि प्राप्त हुई। किसी भारतीय विश्वविद्यालय द्वारा डाक्टरेट की उपाधि के लिए स्वीकृत किया गया हिन्दी विषयक प्रथम शोध प्रबन्ध यही है। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में भारतीय भाषा विज्ञान के प्रोफेसर टर्नर की प्रेरणा से ही श्री सक्सेना ने इस शोध-विषय पर कार्य किया था। सन् 1931 में ही श्री एफ.ई. के को लन्दन विश्वविद्यालय द्वारा 'कबीर ऐन्ड हिज़ फालोअर्स' विषय पर पी-एचडी. की उपाधि प्रदान की गई। हिन्दी साहित्य सम्बन्धी विषय पर भारतीय विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के अन्तर्गत प्रस्तुत किया गया सबसे पहला शोध प्रबन्ध श्री पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल का 'दि निर्गुण स्कूल आफ हिन्दी पोएट्री' है। यह शोध-प्रबन्ध हिन्दू विश्वविद्यालय, काशी के अन्तर्गत प्रस्तुत किया गया था जिस पर विश्वविद्यालय ने उन्हें डी.लिट्. की उपाधि प्रदान की। तदोपरान्त सन् 1934 में श्री जनार्दन मिश्र ने 'सूरदास का धार्मिक काव्य' विषय पर कोनिग्सबर्ग विश्वविद्यालय से पी-एचडी. की उपाधि प्राप्त की और सन् 1935 ई0 में श्री धीरेन्द्र वर्मा को 'ल लाग ब्रज' शोध विषय के लिए पेरिस विश्वविद्यालय द्वारा डी.लिट्. की उपाधि प्रदान की गई। इस प्रकार कहा जा सकता है कि हिन्दी साहित्य की शोध परम्परा के इस आरम्भिक काल में सन् 1911 से लेकर 1035 ई. तक कुल आठ शोध-प्रबन्ध लिखे गए। हालाकि शैशव अवस्था में होने के कारण 'हिन्दी शोध' का स्तर इतना व्यापक नहीं था किन्तु शोध की आरम्भिक दशा ने ही हिन्दी साहित्य सम्बन्धी विषयों पर शोध-कार्य के लिए नए रास्ते खोलने के साथ-साथ विभिन्न विश्वविद्यालयों में हिन्दी को अध्ययन का गौरवपूर्ण स्थान प्रदान किया। हिन्दी शोध का मध्यकाल: सन् 1935 ई. से 1947 ई. तक भारत के विभिन्न विश्वविद्यालयों में हिन्दी शोध कार्य होने लगा। साहित्य के इतिहास, काव्यशास्त्र, भाषा विज्ञान, काव्य-धाराओं, विशिष्ट साहित्यकारों आदि अनेक क्षेत्रों में शोध प्रबन्ध लिखे जाने लगे। इस काल में 30 के लगभग शोध प्रबन्ध विभिन्न भारतीय एवं विदेशी विश्वविद्यालयों में प्रस्तुत किए गए। इस काल में लिखे गए शोध प्रबन्धों में नवीन परिवर्तन एवं परिपक्वता प्रमुख विशेषता रही। डा. सरनाम सिह शर्मा के अनुसार- "इस युग के प्रबन्धों को 'तपा कर कंचन बनाने' की प्रवृत्ति का योग मिला था, जेसा-तैसा लिख डालने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन नहीं मिल पाया था। परख की छलनी में छने हुए शोध प्रबन्धों का अपना मूल्य है। इस काल के गवेषक को अपनी कृति के स्वीकृत होने की आशा से अधिक अस्वीकृत होने का भी भय रहता था। इसलिए उसका ध्यान मार्जन और परिमार्जन की ओर रहता था। इस समय जो शोध-प्रबन्ध लिखे गये उनमें से कई तो फिर से लिखवाये गए। इससे गवेषकों के कान खड़े होते गए। कुछ ऐसा भी लगता है कि इस समय के निर्देशकों और परीक्षकों का उत्तरदायित्व कुछ अधिक प्रबुद्ध था। गवेषक के समक्ष अपनी सफलता और प्रतिष्ठा का प्रश्न था तथा निर्देशक और परीक्षक के समक्ष कर्त्तव्य-निर्वाह का। गवेषकों पर ही नहीं,

निर्देशकों और परीक्षकों पर भी अपनी आलोचना का अंकुश रहता था।" इस प्रकार मध्यकाल में उत्तम कोटि के शोध-प्रबन्धों ने हिन्दी शोध और आलोचना को दिशा दी। हिन्दी शोध का आधुनिक काल: देश की जनता का यह मानना था कि स्वतन्त्रता के उपरान्त अंग्रेजी का आधिपत्य भी समाप्त हो जाएगा। परिणामस्वरूप विश्वविद्यालयों में अंग्रेजी के विद्यार्थियों की संख्या घटने लगी और हिन्दी के प्रति पर्याप्त संभावनाओं ने विद्यार्थियों को अपनी ओर आकर्षित किया। 'राजभाषा' जैसे पद पर सुशोभित होने के पश्चात् हिन्दी के प्रति रूझान बढ़ना स्वाभाविक था। हिन्दी के भविष्य की उज्ज्वलता और रोज़गार के क्षेत्र में हिन्दी के विस्तार ने हिन्दी के विद्यार्थियों की संख्या बढ़ा दी। भारतीय विश्वविद्यालयों में हिन्दी के अध्ययन और अध्यापन दोनों में तीव्र गति से विकास हुआ। इन सभी का प्रभाव हिन्दी शोध कार्य पर भी पड़ा। दक्षिण भारत में हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए स्थापित विभिन्न संस्थाओं से हिन्दी भाषी क्षेत्रों के साथ-साथ अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में भी हिन्दी भाषा के अध्ययन के प्रति लोगों में रुचि जागृत हुई। स्वतन्त्रता और आधुनिकता की जीवन-धारा में साहित्य ने भी करवट बदली जिससे हिन्दी साहित्य में शोध की नयी सम्भावनायें उपस्थित हो गईं। स्वतन्त्रता से पूर्व जिन विषयों पर पुस्तकों के अभाव में ही, शोधकार्य हो चुके थे, स्वतंत्रता के पश्चात् वे विषय नए तथ्यों के कारण फिर से शोध के विषय बन गए। विश्वविद्यालयों में एम.फिल्., पी-एचडी. और डी.लिट्. की उपाधियों के लिए शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किए जाने लगे।

वर्तमान में 200 के करीब विश्वविद्यालयों में हिन्दी के विभिन्न विषयों पर हजारों की संख्या में या तो शोध कार्य हो चुके हैं या हो रहे हैं। जैसे-जैसे साहित्य उत्तरोतर विकास की ओर बढ़ता चला जायेगा, हिन्दी शोध की गति भी उतनी ही तेजी से बढ़ती जायेगी। लेकिन अभी भी लोक साहित्य और लोक भाषा का क्षेत्र शोध की ओर बाट जोह रहा है। इस क्षेत्र में अभी तक अधिक श्रेष्ठ शोध कार्य नहीं हो पाए हैं। अब भाषा-वैज्ञानिक शोध की दिशा में भी लोगों की रुचि बढ़ने लगी है किन्तु इसके लिए अब भी शोधार्थियों को विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता है। शायद ही साहित्य का कोई ऐसा क्षेत्र हो जिस पर वर्तमान में शोध कार्य न हो रहा हो लेकिन सत्य यह भी है कि सम्भावनाये और भी हैं। शोध की प्रवृति एवं प्रक्रियाः शोध तथ्यों का परिशोधन करता है। ये तथ्य प्रामाणिक होते हैं इसलिए प्रामाणिक तथ्यों के महत्त्व के कारण शोध की शैली वैज्ञानिक होती है। शोध की प्रवृत्ति सत्य की प्रतिष्ठा करना है और तथ्यों के आधार पर ही सत्य की प्रस्थापना की जाती है। यानि 'सत्य' के अन्वेषण के लिए 'तथ्य' का होना आवश्यक है। इसी के माध्यम से शोधार्थी 'सत्य' की प्रतिष्ठा करता है। शोध की प्रवृत्ति इसी सत्य के अन्वेषण की प्रक्रिया ही है। लेकिन यह आज का 'सत्य' कल नए तथ्यों के आलोक में असत्य सिद्ध होकर पुनः 'तथ्य' भी बन सकता है। इस सम्बन्ध में एक बात जानना ओर भी आवश्यक है कि सत्य असीम है इसलिए यह आवश्यक नहीं कि शोध कार्य हमें सत्य की पूर्ण अभिव्यक्ति तक पहुंचा दे। शोधार्थी उपलब्ध तथ्यों के आधार पर ही 'सत्य' की खोज करता है। कई बार अनावश्यक तथ्यों के कारण शोधार्थी वास्तविक 'सत्य' को

पूर्ण रूप से प्रकाश में नहीं ला पाता। सत्य तो यही है कि शोध की प्रवृत्ति 'सत्य' को पूर्ण रूप से प्रतिष्ठित करना है इसलिए शोधार्थी को पूर्वाग्रह से मुक्त होकर, 'तथ्यों' का भली भांति विश्लेषण करना चाहिए जिससे वह वास्तविक 'सत्य' को प्रतिष्ठित कर सके। जैसा कि विदित है 'शोध' का मुख्य प्रयोजन अज्ञात की खोज करना है, अतः ज्ञान से प्रकृति और मनुष्य की अनन्य उपलब्धियों को खोजकर उन्हें विवेचित करते हुए प्रस्तुत करना ही शोध का कार्य है। ज्ञान का क्षेत्र जितना विस्तृत है उतना ही शोध का क्षेत्र भी। जीवन का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है जो शोध का विषय नहीं बन सकता। ज्ञान विज्ञान की पूर्ण गहराई तक पहुंचना और उसे प्रकाशित करना ही शोधार्थी का लक्ष्य होता है। साहित्य और साहित्येत्तर सभी प्रकार के विषय 'शोध' के क्षेत्र हैं। भारतीय चिंतकों ने सृष्टि के समस्त ज्ञान को निम्नवत् तीन रूपों में बांटा हैः काव्य रूप (इसके अन्तत विश्व का समस्त साहित्य रखा जाता है) शास्त्र रूप (प्रकृति और मानव जीवन का समग्र विज्ञान इस श्रेणी में आता है) पुराण तथा इतिहास रूप (साहित्य, प्रकृति और मानव जीवन के विकास का पूर्णरूपेण अध्ययन) हिन्दी शोध के वर्तमान एवं भविष्य पर जब चर्चा चल रही हो तो शोध के महत्त्वपूर्ण अंग 'तत्त्व' पर चर्चा न करना असंगत रहेगा। अतः विभिन्न विश्वविद्यालयों द्वारा शोध के लिए तय किए गए नियमों के आधार पर शोध के तत्त्व अथवा विशेषताएं निम्नवत् हैं अज्ञात एवं अल्पज्ञात तथ्यों की खोजः साहित्य के अध्ययन के सीमित क्षेत्र के कारण यह आवश्यकता महसूस की जाने लगी कि जिन कृतियों या ग्रंथों के विषय में कुछ अल्पज्ञात सामग्री उपलब्ध थी उसी को आधार बनाकर, क्यों न उस साहित्य की पूर्ण खोज की जाए। तथ्यों अथवा मान्यताओं का नवीन आख्यानः साहित्य के क्षेत्र में जो भी उपलबध सामग्री अथवा ज्ञात तथ्य हैं, उन तथ्यों अथवा मान्यताओं की नवीन व्याख्या करना शोधार्थी की अनवार्यता है। व्यवस्थित एवं तर्कसंगत विभाजनः प्रत्येक शोधकार्य की एक व्यवस्थित प्रक्रिया होती है जोकि विषय को पूर्ण रूप से वैज्ञानिक आधार पर प्रस्तुत करती है। वैज्ञानिक शैलीः शोध की शैली नितान्त वैज्ञानिक होती है। विषय-निर्वाचन से लेकर शोध प्रबन्ध की समाप्ति तक वैज्ञानिक शैली का पालन शोध कार्य में किया जाता है। ज्ञान का विस्तारः शोधार्थी स्वभावतः सत्य का अन्वेषी है और सत्य की सार्वभौम सत्ता का दर्शन ही ज्ञान है। शोधार्थी का पुनीत कत्तव्य है कि वह निरपेक्ष दृष्टि से गृहीत विषय का विश्लेषण-विवेचन कर नवीन आख्यान प्रस्तुत करते हुए ज्ञान का विस्तार करे। सत्यनिष्ठ मौलिकताः 'मौलिकता' ऐसा तत्त्व है जो शोध और शोधार्थी दोनों को ही पहचान देता है। शोध की उपादेयता तभी है जब उसमें सत्यनिष्ठ मौलिकता का गुण विद्यमान हो।

आज साहित्य के क्षेत्र की व्यापकता के कारण ही अनुसंधान का क्षेत्र भी व्यापक हुआ है। शोध की जितनी सम्भावनाएं बढ़ती जायेंगी उतना ही शोध की दिशाओं में भी परिवर्तन होगा और शोध किसी नए रूप-आकार में हमारे सामने आयेगा। वर्तमान समय में साहित्य के क्षेत्र में शोध के विभिन्न प्रकार हैं जिनका विवरण निम्नवत् हैः साहित्यिक शोधः साहित्य में शोध की परम्परा आधुनिकता की देन है। साहित्य के क्षेत्र की व्यापकता के कारण ही 'शोध' का क्षेत्र भी व्यापक

है। वर्तमान समय में साहित्य के क्षेत्र में शोध के विभिन्न प्रकार प्रचलन में हैं जिनमें से साहित्यिक शोध या साहित्यिक अनुसंधान भी प्रमुख स्थान रखता है। साहित्यिक शोध को हम चार भागों- जीवन वृत्तीय शोध, प्रवृत्तिगत शोध, प्रभावगत शोध और आलोचनात्मक शोध में विभाजित कर सकते हैं। ऐतिहासिक शोधः ऐतिहासिक शोध के अन्तर्गत इतिहास का पुनर्लेखन, उद्भव और विकास, परम्परा, पृष्ठभूमि, युग, साहित्यधारा, विधा, पद्धति, प्रभाव आदि अनेक रूपों में शोधकार्य सम्भव हैं। भाषा वैज्ञानिक शोधः इसमें भाषा की रचना-प्रक्रिया, भाषा की संरचना तथा भाषा के उपकरणों, शब्दक शों, लिपि सुधार के आधारों का विवेचन-विश्लेषण किया जाता है। शैली वैज्ञानिक शोधः शैली वैज्ञानिक शोध वास्तव में भाषा-विज्ञान का ही एक अंग होने के कारण अत्यन्त दुरूह माना जाता रहा है किन्तु 'शोध' का स्वतंत्र प्रकार होने से इसकी उपयोगिता और क्षेत्र का विस्तार हुआ है। परम्परागत और आधुनिक प्रतीकों, बिम्बों, उपमानों आदि के अध्ययन को शैली वैज्ञानिक शोध द्वारा ही सहजता से समझा जा सकता है। समाजशास्त्रीय शोधः साहित्य और समाज का गहरा सम्बन्ध है। साहित्य और समाज के सम्बन्धों का वैज्ञानिक अनुशीलन ही 'समाजशास्त्रीय शोध' का कार्य है। मनोवैज्ञानिक शोधः साहित्य मानव-मन की अभिव्यक्ति है और उस अभिव्यक्ति का मन के स्तर पर किया गया विश्लेषण 'मनोवैज्ञानिक शोध' कहलाता है। सांस्कृतिक शोधः संस्कृति, धर्म, दर्शन, परम्परा, कला और नैतिकता के आलोक में भारतीय संस्कृति के विभिन्न रूप जीवन्त हैं, इन जीवन्त रूपों का अनुशीलन और उनका सामाजिक सम्बन्ध ही 'सांस्कृतिक शोध' द्वारा हमारी संस्कृति को अनन्य बना सकता है। तुलनात्मक शोधः दो कृतियों, दो भाषाओं, दो लेखकों, दो कालों, दो परिवेशों आदि को स्वतंत्र आधार प्रदान कर उनका समानान्तर अध्ययन-विश्लेषण 'तुलनात्मक शोध' कहलाता है।

हिन्दी शोध का बहुत ही महत्त्वपूर्ण अंग है शोध की प्रक्रिया जो मूलतः वैज्ञानिक है। यह शोध विषय को व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत करने की एक ऐसी प्रक्रिया है जो कुछ नियमों से बंधी रहती है। शोधार्थी इन नियमों की परिधि में रहकर ही अपना शोध कार्य पूर्ण करता है। शोध की प्रक्रिया में शोधार्थी और निर्देशक दोनों की भूमिका महत्त्वपूर्ण होती है। दोनों की योग्यता एवं दृष्टि शोध को सही दिशा देती है। शोधार्थी और निर्देशक के उपरान्त शोध प्रक्रिया में- विषय चयन, रूपरेखा निर्माण, सामग्री संकलन, शोध प्रविधि, सामग्री संकलन एवं विशलेषण, विषय-सूची एवं भूमिका आदि महत्त्वपूर्ण चरण शामिल हैं जिनका विवरण निम्नवत् हैः शोधार्थी: (अभिरुचि, धैर्य, परिश्रम एवं लग्न, योग्यता, शिष्ट आचरण, स्वास्थ्य, अध्ययन की प्रवृत्ति एवं पृष्ठभूमि, व्यक्तित्व की प्रकृति, मनोवृति जैसे गुणों का होना अतिआवश्यक है) निर्देशक: (पूर्व शोध कार्यों का ज्ञान, क्षमता, अवकाश, रुचि, धैर्य एवं अनवरत चिन्तन की प्रवृत्ति, कर्त्तव्य पालन की भावना, अपनी सीमाओं एवं मूल्यवता का विशेष ध्यान, अहंकारमुक्त प्रवृत्ति, निष्पक्ष एवं तटस्थ दृष्टि, विषय विशेषज्ञता, उत्साहवर्द्धन क्षमता का होना जरूरी है) निर्देशन के सिद्धान्त: (शोध निर्देशन के कुछ महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों एवं विधियों कां ज्ञान आवश्यक) विषय-चयन: (योजनामूलक पद्धति, स्वतंत्र वैयक्तिक पद्धति,

स्वीकृतिमूलक पद्धति, सूची पद्धति) शोध कार्य का स्थान: (विशेषज्ञ-विद्वानो की उपलब्धता, शोध सम्बन्धित अपेक्षित सामग्री, शोध समुचित वातावरण, शोध विषयों पर चर्चाओं-परिचर्चाओं, सेमिनारों, संगोष्ठियों का प्रावधान) शोध विषय का शीर्षक: (विषय क्षेत्र में स्पष्टता, स्वरूप और सीमाओं का निर्धारण, निश्चित एवं संदेह मुक्त शीर्षक, शोध विषय की उपयोगिता)

रूपरेखा-निर्माण: (पूववर्ती शोध प्रबन्धों की रूपरेखाओं का अध्ययन, दो प्रकार की रूपरेखा- संक्षिप्त रूपरेखा एवं विस्तृत रूपरेखा) शोध प्रबन्ध का पूर्ण ढांचा (चार भाग- भूमिका, मूल विषय वस्तु, निष्कर्ष और परिशिष्ट) सामग्री संकलन: (मुख्य सामग्री, सहायक सामग्री; सामग्री संकलन के स्रोत- मुख्य कोटि के स्रोत, मध्यम कोटि के स्रोत, सहयोगी कोटि के स्रोत; सामग्री संकलन की पद्धतियां- आसन-कार्य पद्धति (इसमें 'कार्ड पद्धति' सामान्यता 8श्ग5श् अथवा 6श्ग5श् सर्वाधिक श्रेष्ठ पद्धति है), घुमक्कड़ कार्य पद्धति, साक्षात्कार पद्धति, प्रश्नावली पद्धति; इसके अतिरिक्त प्रेक्षण, प्रलेख, प्रशासकीय प्रतिवेदन, प्रकाशित आंकड़े, अभिलेख भी सामग्री संकलन की पद्धतियां हैं) सामग्री विश्लेषण: (निरीक्षण एवं सम्पादन के उपरान्त संकलन, संकलित सामग्री की प्रामाणिकता की जांच, विश्लेषण की दृष्टि (विवेक, ईमानदारी और चिन्तन शक्ति द्वारा) सामग्री उपयोग: (रूपरेखा (अध्याय क्रमानुसार) को आधार बनाकर शोध सामग्री का संयोजन) शोध प्रबन्ध लेखन: (प्रारम्भिक भाग- मुख पृष्ठ, प्राक्कथन अथवा भूमिका- प्रवेश की प्रेरणा, गृहीत विषय की आवश्यकता, उपयोगिता एवं मौलिकता, विषय से सम्बद्ध शोध कार्यों की संक्षिप्त सूची एवं सीमा, अध्यायों की संक्षिप्त भाव भूमि तथा आभार अथवा कृतज्ञता ज्ञापन; विषय सूची- क्रमबद्धता, अध्याय के शीर्षक, उपशीर्षक, खण्ड, ग्रन्थ-सूची, परिशिष्ट; विधियां- वर्ण चिन्ह, क्रम संख्या, रोमन अंको आदि का प्रयोग; टंकित शोध प्रबन्ध की पृष्ठ संख्या, तालिका सूची, चित्र सूची; मूल भाग- विषय प्रवेश, मूल प्रबन्ध, निष्कर्ष या उपसंहार; अंतिम भाग- सन्दर्भ ग्रन्थ सूची- आधार या मूल कृतियां, सहायक कृतियां, आलोचनात्मक कृतियां,
पत्र-पत्रिकाएं, कोश, अप्रकाशित शोध प्रबन्ध; परिशिष्ट)

विषय प्रवेश: (सामान्यतः प्राक्कथन, आभार या कृतज्ञता-ज्ञापन पक्ष को छोड़कर उसके सभी तत्त्व 'विषय प्रवेश' में समाहित किए जाएंगे) मूल प्रबन्ध: (शोध विषय से सम्बन्धित सभी अध्यायों को क्रमबद्ध रूप से लिखना, प्रत्येक अध्याय से पूर्व उसकी संक्षिप्त भूमिका, शोध प्रबन्ध के प्रत्येक अध्याय में शीर्षक मोटे आकार का, उपशीर्षक उससे कम मोटा और उपशीर्षक-खण्ड सामान्य आकार का किन्तु अधिक काला, शेष प्रबन्ध सामान्य फान्ट में टंकित, अध्यायों में दिए गए उद्धरणों की पाद-टिप्पणी सम्बन्धित उद्धरण के पृष्ठ के नीचे ही दी जायेगी) उपसंहार: (सम्पूर्ण अध्यायों की समाप्ति के उपरान्त सभी अध्यायों के निष्कर्ष को समेकित रूप से उपसंहार के अन्तर्गत रखा जाएगा) ग्रंथ सूची: (शोध ग्रन्थ लेखन में प्रयुक्त सभी प्रकार के ग्रन्थों, स्रोतों को अकारादि क्रम से दर्शाना, लेखक का नाम, कृति का नाम, सम्पादित कृति है तो सम्पादक का नाम, अनूदित कृति होने की स्थिति में अनुादक का नाम, प्रकाशक, प्रकाशन स्थान, प्रकाशन वर्ष,

संस्करण सभी का स्पष्ट रूप से उल्लेख, पत्र-पत्रिकाओं की स्थिति में उनकी अंक संख्या अथवा विशेषांक का उल्लेख; सर्वप्रथम आधार या मूल ग्रन्थ, सहायक ग्रन्थ, आलोचनात्मक ग्रन्थ, पत्र-पत्रिकाएं, कोश तथा अन्त में अप्रकाशित शोध प्रबन्धों का उल्लेख किया जाएगा) परिशिष्ट: (विशिष्ट विषयों सम्बन्धी लेख, साक्षात्कार, भेंटवाताओं के अंश, प्रश्नावली के प्रारूप आदि को रखा जाएगा) उद्धरण: (दो प्रकार से- एक तो लेखक या विद्वान के मत या विचार को उन्हीं की भाषा में अपने शोध प्रबन्ध में प्रयोग करना, दूसरा- यदि उद्वरण बहुत लम्बा/बड़ा है तो उन पंक्तियों का भाव-रूपांतर कर उसे अपने शब्दों में अभिव्यक्त भी किया जा सकता है।) सन्दर्भोलेख: (शोध प्रबन्ध में दिए गए उद्धरणों की प्रामाणिकता सिद्ध करने के लिए सन्दर्भ का उल्लेख किया जाता है, उद्धरणों की प्रामाणिकता के साथ-साथ उनके स्रोत का भी ज्ञान; सन्दर्भ स्थल के चार रूप- प्रबन्ध के अन्त में, अध्याय के अन्त में, उद्धरण समाप्ति पर, पाद टिप्पणी में) पाद-टिप्पणी: (तीन विधियां- प्रत्येक पृष्ठ पर क्रम संख्या 1, 2, 3 अंकित करना, अगले पृष्ठ पर क्रम संख्या 4, 5, 6 से शुरू करना, यदि पहले अध्याय में 50 उद्धरण हैं तो दूसरे अध्याय को 51 से शुरू करना; उद्धरण की संख्या ऊपर उठी हुई होती है, प्रत्येक उद्धरण के लिए नई पंक्ति का चयन, एक पृष्ठ पर बार-बार आने वाले एक-से उद्धरण को 'वही' लिखकर अंकित करना, लेखक का नाम फिर कृति का नाम और फिर पृष्ठ संख्या, यहां प्रकाशक, प्रकाशन या संस्करण देने की आवश्यकता नहीं होती, क्योंकि 'ग्रन्थ सूची' में इनका पूर्ण परिचय दिया जाता है, कृति में दो लेखकों की स्थिति में कृति पर लिखे हुए नामों के क्रम से ही उन्हें 'पाद टिप्पणी' में लिखा जाना चाहिए, उद्धरण मूल कृति से प्रापत न करके किसी अन्य कृति से लिया जाता है तो इस स्थिति में पाद टिप्पणी में मूल उद्धरण के लेखक एवं उसकी कृति का नाम देते हुए जिस कृति से उसे स्वीकार किया गया है, उस कृति का उल्लेख साभार रूप में किया जाना चाहिए, सम्पादित कृति की स्थिति में कोष्ठक में 'सं.लिखकर सम्पादक का नाम लिखना चाहिए, अनूदित कृति के सन्दर्भ में मूल लेखक के उपरान्त कृति का नाम देकर कोष्ठक में अनुवादक के लिए 'अनु.' शब्द लिखकर अनुवादक का नाम लिखना चाहिए, पत्रिकाओं अथवा समाचार पत्रों आदि से लिए गए उद्धरणों के संदर्भ देते समय 'पाद-टिप्पणी' में लेखक का नाम, लेख के शीर्षक का नाम, पत्र-पत्रिका का नाम, अंक संख्या तथा प्रकाशन मास अथवा तिथि का उल्लेख किया जाएगा)

हिन्दी शोध में गिरावट के कारण:

हिन्दी शोध के स्तर में आ रही गिरावट के कुछ प्रमुख कारणों को हम चुनौतियों के रूप में रेखांकित कर सकते हैं। विगत एक दशक पहले शोध के क्षेत्र में आई बाढ़ के कारण जहां छात्रों में शीघ्रातिशीघ्र डिग्रियां प्राप्त करने की होड़ लगी, वहीं विभिन्न विश्वविद्यालयों ने अनाधिकृत रूप से देशभर में अध्ययन केन्द्रों की स्थापना की और मुंह मांगी कीमत पर शोध के नाम पर उपाधियां बांटी जाने लगी। इन्हीं सब कारणों से शोध के स्तर में गिरावट आना स्वाभाविक ही था। इसके अतिरिक्त इस दिशा में और भी कुछ ऐसी समस्याएं हैं या प्रचलित कारण हैं जो शोध के निम्न स्तर में अपना योग दे रहे हैं। इनमें- दोषपूर्ण प्रवेश-प्रक्रिया, उपर्युक्त विश्वविद्यालय

चयन, शोध निर्देशक चयन तथा विषय चयन की समस्या, शोधार्थी की अभिरुचि तथा क्षमता का मूल्यांकन न करना, निर्देशक का अहम् एवं अवांछित आशाएं-आकांक्षाएं, शोधार्थी का उद्देश्य मात्र डाक्टर की उपाधि प्राप्त करना, तथ्य संकलन एवं संयोजन में असंतुलन, सहायक पुस्तकों एवं पत्र-पत्रिकाओं की कमी, विश्वविद्यालयों में आपसी तालमेल की कमी, शोध रूपरेखा में पर्याप्त भिन्नता, शोध प्रबन्ध प्रक्रिया एवं मूल्यांकन में समरूपता का अभाव, शोध मूल्यांकनकर्ताओं की गैर-जिम्मेदाराना भूमिका, शोध प्रबन्ध प्रकाशन के लिए प्रोत्साहन की कमी आदि शामिल हैं। हिन्दी शोध में सुधार के उपाए एवं संभावनाएं: हिन्दी साहित्य के विभिन्न क्षेत्रों में अनुसंधान की अपार संभावनाएं हैं लेकिन शोध स्तर में होने वाली गिरावट से बचने और उसकी प्रतिष्ठा को शीर्ष स्तर प्रदान करने के लिए जरूरी है कि समय रहते इसमें अपेक्षित आवश्यक सुधार कर लिए जाएं। शोध में सुधार लाने के लिए जहां सरकारी/गैर-सरकारी शैक्षणिक संस्थानों/विश्वविद्यालयों एवं अन्य सम्बन्धित उच्च स्तरीय संस्थाओं को आवश्यक नीतियां एवं दिशा-निर्देश बनाकर उन पर अमल करना/करवाना चाहिए वहीं शोध-निर्देशकों एवं शोधार्थियों को मेहनत, लग्न एवं ईमानदारी से कार्य करने की महती आवश्यकता है। हिन्दी शोध के स्तर में सुधार के उपाए एवं संभावनाओं में मुख्य रूप से- शोधार्थी की अभिरुचि एवं क्षमता का आकलन, उचित विश्वविद्यालय का चयन, उपयुक्त निर्देशक का चयन, उचित विषय का चयन, विश्वविद्यालयों का आपसी तालमेल आवश्यक, कार्यशालाएं एवं शोध-संगोष्ठियों का समय-समय पर आयोजन, शोध-पत्र प्रकाशन आवश्यक, प्रवेश प्रक्रिया में पर्याप्त सुधार, शोध-प्रबन्ध के विभिन्न पक्षों में समरूपता, शोध ग्रन्थ प्रकाशन हेतु प्रोत्साहन योजनाएं, शोध विषयों का अद्यतन प्रकाशन एवं उपलब्धता, शोध-निर्देशकों एवं मूल्यान्कंकर्ताओं के लिए समय-सीमा निर्धारण, श्रेष्ठ शोध एवं निर्देशक के लिए साहित्यिक सम्मान एवं पुरस्कार योजनाएं, शोध शैक्षणिक संस्थानों का समय-समय पर निरीक्षण, शोध एवं उच्च शिक्षा के व्यावसायीकरण पर पूर्ण प्रतिबन्ध, लोक साहित्य एवं लोक भाषा तथा भाषा विज्ञान के क्षेत्र में शोध की संभावनाएं के चलते इस क्षेत्र में शोध पर बल, शोधार्थियों के लिए विशेष शोध प्रशिक्षण की आवश्यकता, जे.आर.एफ. की तरह ही शोधरत उन सभी छात्रों को प्रोत्साहन राशि का प्रावधान जो किसी कालेज या युनिवर्सिटी में नियमित सेवा में नहीं हैं, 'कट-पेस्ट' प्रचलन पर पूर्ण प्रतिबन्ध तथा शोधार्थियों के लिए शोध सम्पन्न की आवश्यक समय-सीमा को आगामी न बढ़ाया जाना आदि शामिल हैं।

निष्कर्षः

प्रत्येक भाषा में दो स्तरों पर शोध होता रहा है- भाषा के क्षेत्र में भाषाविज्ञान और पाठनानुसंधान की दृष्टि से शोध किया जाता है और भाषा-विशेष में लिखित साहित्य के क्षेत्र में। हिन्दी में इन दोनों ही स्तरों पर शोध होता रहा है और हो रहा है। इनमें भाषा के क्षेत्र में, हिन्दी में अभी शोध के लिए पर्याप्त क्षेत्र पड़ा है, क्योंकि उपभाषाओं और बोलियों की दृष्टि से हिन्दी अत्यन्त समृद्ध भाषा है। हिन्दी में भाषा के क्षेत्र में पर्याप्त शोध न हो सकते का कारण हमारे शोध-साधनों की सीमितता है। भाषा विज्ञान के क्षेत्र में पाश्चात्य जगत में बहुत-सी नई प्रणालियों एवं अत्याधुनिक

यांत्रिकी का विकास हुआ है जिसके प्रयोग के लिए वहां कुशल शोध निर्देशक पहले शोधार्थियों को प्रशिक्षण देते हैं। हमारे यहां इस दिशा में अब विकास किया जा रहा है जिससे शोध की संभावनाएं बढ़ी हैं। 'शोध' का मुख्य प्रयोजन अज्ञात की खोज से आरम्भ होता है इसलिए ज्ञान के अगाध भण्डार से प्रकृति और मनुष्य की अनन्य उपलब्धियों को खोजकर उन्हें विवेचित करते हुए प्रस्तुत करना ही शोध का कार्य है। ज्ञान का क्षेत्र जितना विस्तृत है उतना ही शोध का क्षेत्र भी। जीवन का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं है जो शोध का विषय नहीं बन सकता। ज्ञान-विज्ञान की पूर्ण गहराई तक पहुंचना और उसे प्रकाशित करना ही शोधार्थी का लक्ष्य होता है। साहित्य और साहित्येतर सभी प्रकार के विषय 'शोध' के क्षेत्र हैं। कुछ लोग शोध को व्यवसाय मानते हैं। वस्तुतः शोध कोई व्यवसाय नहीं है, वह तो मानव जीवन को समृद्ध और सु'न्दर बनाने की दिशा में किया गया एक महान कार्य है। अतः हिन्दी शोध की वर्तमान स्थिति के विश्लेषण के पश्चात् यह स्पष्ट हो जाता है कि हिन्दी शोध का क्षेत्र अपने भीतर विशाल संभावनाएं लिए उपस्थित है, आवश्यकता है तो निष्ठा, लग्न, समर्पण एवं ईमानदारी की। शोधार्थी, निर्देशक, विभाग, विश्वविद्यालय, सरकार एवं शोध क्षेत्र से जुड़ी शीर्ष संस्थाओं आदि सभी के शोध के प्रति समर्पित भाव द्वारा ही हिन्दी शोध को श्रेष्ठ एवं उच्च स्थान पर आसीन किया जा सकता है।

संदर्भ

1 डा. जोगेश कौर, डा. हरीश अरोड़ा, 'शोध: निकष पर'
2 डा. तिलक सिंह, नवीन शोध विज्ञान
3 डा. रवीन्द्र मिश्र, ''हिन्दी शोध''।
4 डा. उदयभानु सिंह, अनुसंधान का विवेचन'।
5 डा. सरनाम सिंह शर्मा, शोध प्रक्रिया एवं विवरणिका
6 डा. बैजनाथ सिंहल, शोध: स्वरूप एवं मानक कार्यविधि''।